



भारत में धार्मिक राष्ट्रवाद: हिंदुत्व विचारधारा और इसके राजनीतिक परिणाम

¹ अनीता देवी, ²डॉ. नवनीश त्यागी

¹शोधार्थी, ²पर्यवेक्षक

¹⁻²विभाग :राजनीति विज्ञान, शोभित विश्वविद्यालय, मेरठ, उत्तर प्रदेश, भारत

सार

यह शोधपत्र हिंदुत्व (हिंदू राष्ट्रवाद) के रूप में उभरी एक शक्तिशाली राजनीतिक विचारधारा का विश्लेषण करता है और इसके राष्ट्रीय राजनीति पर प्रभावों की जांच करता है। यह अध्ययन यह दर्शाता है कि किस प्रकार धर्म, विशेष रूप से हिंदू धर्म, को एक राजनीतिक उपकरण के रूप में उपयोग किया गया है, जो चुनावी रणनीतियों, राष्ट्रीय बहसों और सामाजिक गतिशीलता को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करता है। हिंदुत्व, जिसे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) और विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) जैसी संगठनों द्वारा बढ़ावा दिया गया, ने भारतीय राजनीति को नया रूप दिया है और भारतीय संविधान द्वारा स्थापित धर्मनिरपेक्ष ढांचे को चुनौती दी है। इस विश्लेषण में राम जन्मभूमि आंदोलन और बाबरी मस्जिद का विध्वंस जैसे महत्वपूर्ण घटनाओं का अध्ययन किया गया है, जिन्होंने हिंदुत्व को एक राजनीतिक शक्ति के रूप में स्थापित करने में योगदान दिया। इसके अतिरिक्त, यह शोध यह भी समझाता है कि हिंदुत्व के राजनीतिक परिणामों, धार्मिक अल्पसंख्यकों पर इसके प्रभाव और धर्मनिरपेक्ष भारत के लिए इसके खतरों के बारे में क्या संदेश है।

मुख्य शब्द: हिंदुत्व, हिंदू राष्ट्रवाद, धार्मिक राजनीति, चुनावी रणनीति, राम जन्मभूमि आंदोलन, बाबरी मस्जिद विध्वंस, आरएसएस (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ), वीएचपी (विश्व हिंदू परिषद), राजनीतिक ध्रुवीकरण।

परिचय:

धर्म लंबे समय से राजनीति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा है। भारत में, धर्म केवल व्यक्तिगत आस्था का विषय नहीं है, बल्कि यह एक शक्तिशाली राजनीतिक संसाधन बन चुका है। धर्म का राजनीति में इस्तेमाल भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण पहलू रहा है, और यह खासकर स्वतंत्रता के बाद के समय में बढ़ा है। हिंदुत्व, जो हिंदू धर्म और उसकी संस्कृति को प्राथमिकता देने का विचार है, ने भारतीय राजनीति को गहरे तरीके से प्रभावित किया है। यह विचारधारा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) और विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) जैसी संगठनों के माध्यम से फैलती गई, और इसने भारतीय राजनीतिक विमर्श को नया रूप दिया। राम जन्मभूमि आंदोलन, जो बाबरी मस्जिद के स्थल पर एक हिंदू मंदिर बनाने की वकालत करता था, ने हिंदुत्व के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस आंदोलन ने हिंदू मतदाताओं को एकजुट किया और एक साझा धार्मिक मुद्दे के इर्द-गिर्द उन्हें लामबंद किया। यह अध्ययन हिंदुत्व के उदय, इसके राजनीतिक परिणामों और धर्म और राजनीति के अंतर्संबंधों को समझने की कोशिश करता है।

राजनीतिक उपकरण के रूप में धर्म

धर्म लंबे समय से राजनीतिक क्षेत्र में एक शक्तिशाली उपकरण रहा है। भारत में, धर्म केवल व्यक्तिगत आस्था का विषय नहीं है, बल्कि एक अत्यंत प्रभावशाली राजनीतिक संसाधन है। सार्वजनिक चर्चा को आकार देने, राजनीतिक मतदाताओं को संगठित करने और नीतिगत निर्णयों को निर्देशित करने में इसकी भूमिका निर्विवाद है। हालांकि, राजनीति में धर्म का उपयोग विवादों से परे नहीं है। यह धर्म और शासन के बीच संबंध, धर्मनिरपेक्षता और धर्म तथा राज्य की सीमाओं के बारे में महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है।

भारत में, धर्म को राजनीतिक उपकरण के रूप में राजनीतिक दलों और धार्मिक नेताओं दोनों द्वारा इस्तेमाल



किया गया है, अक्सर ऐसे तरीकों से जो राष्ट्रीय नीतियों, चुनावी परिणामों और सामाजिक गतिशीलता को प्रभावित करते हैं। धर्म का राजनीतिकरण और राजनीतिक प्रक्रियाओं में धार्मिक नेताओं की सक्रिय भागीदारी भारत में धर्म और राजनीति के अंतर्संबंध पर चर्चा का केंद्र बन गई है।

धर्म का राजनीतिकरण

धर्म का राजनीतिकरण उस प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसके द्वारा धार्मिक मान्यताओं और पहचानों का राजनीतिक लाभ के लिए उपयोग किया जाता है। यह घटना भारतीय राजनीति का एक महत्वपूर्ण पहलू रही है, विशेषकर स्वतंत्रता के बाद के काल में। धर्म का राजनीतिक उपकरण के रूप में उपयोग कई रूपों में देखा जाता है, जिनमें चुनावी रणनीतियाँ, राष्ट्रीय विमर्श का निर्माण और नीतियों का वैधीकरण शामिल हैं।

धर्म और चुनावी राजनीति

धर्म का इस्तेमाल अक्सर मतदाताओं को लामबंद करने के लिए किया जाता रहा है, खासकर भारत जैसे धार्मिक रूप से विविध देश में। राजनीतिक दल अक्सर धार्मिक समुदायों को लुभाते हैं और खुद को धार्मिक हितों और मूल्यों के रक्षक के रूप में प्रस्तुत करते हैं। यह दृष्टिकोण विशेष रूप से चुनाव प्रचार के दौरान स्पष्ट होता है, जहां धर्म का उपयोग भावनात्मक अपील पैदा करने और धार्मिक पहचान के आधार पर वोट हासिल करने के लिए किया जाता है।

उदाहरण के लिए, 1990 के दशक में भाजपा का सत्ता में आना पार्टी द्वारा हिंदू राष्ट्रवाद को अपनाने के साथ हुआ। राम जन्मभूमि आंदोलन, जिसने अयोध्या में बाबरी मस्जिद स्थल पर राम मंदिर के निर्माण की वकालत की, 1980 और 1990 के दशक के दौरान भारतीय राजनीति का एक प्रमुख मुद्दा बन गया। इस आंदोलन का उपयोग हिंदू मतदाताओं को एकजुट करने और एक साझा धार्मिक मुद्दे के इर्द-गिर्द उन्हें लामबंद करने के लिए किया गया। एल.के. आडवाणी जैसे नेताओं के नेतृत्व में भाजपा ने इस आंदोलन का लाभ उठाते हुए महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रभाव हासिल किया और खुद को हिंदू हितों के राजनीतिक रक्षक के रूप में प्रस्तुत किया (जैफरेलॉट, 1996)।

इसी प्रकार, बिहार, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में क्षेत्रीय राजनीतिक दल अक्सर वोट हासिल करने के लिए धार्मिक समूहों के साथ गठबंधन करते हैं। इन राज्यों में राजनीतिक दल धार्मिक आवश्यकताओं को पूरा करने का वादा करते हैं, धार्मिक संस्थानों को वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं, या किसी एक धार्मिक समूह के पक्ष में नीतियों का समर्थन करते हैं। मतदाताओं को लामबंद करने के लिए धर्म का यह उपयोग अक्सर धार्मिक ध्रुवीकरण को बढ़ाता है, जिससे समाज धार्मिक आधार पर तेजी से विभाजित होता जा रहा है (कोहली, 2004)।

धार्मिक पहचान और राजनीतिक दल

धर्म कई भारतीय राजनीतिक दलों के मंचों को आकार देने में केंद्रीय भूमिका निभाता है। पहचान-आधारित राजनीति अपनाने वाले राजनीतिक दल-जहां विशिष्ट धार्मिक या जाति-आधारित समुदायों को निशाना बनाया जाता है-धर्म को अपनी राजनीतिक पहचान के एक प्रमुख घटक के रूप में उपयोग करते हैं। कई मामलों में, ये दल वैधता और विश्वसनीयता हासिल करने के लिए धार्मिक संगठनों के साथ गठबंधन करते हैं।

उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी (एसपी) पारंपरिक रूप से मुस्लिम समर्थन पर निर्भर रही है, और उसका राजनीतिक मंच मुस्लिम समुदाय की जरूरतों और मांगों को पूरा करता है। इसी प्रकार, केरल स्थित इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग (आईयूएमएल) इस क्षेत्र में मुस्लिम हितों का प्रतिनिधित्व करके एक महत्वपूर्ण राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरी है। इसी तरह, पंजाब राज्य में सिख धार्मिक समूह



राजनीतिक क्षेत्र में प्रभावशाली रहे हैं, जिनमें शिरोमणि अकाली दल (एसएडी) सिख समुदाय के हितों का प्रतिनिधित्व करता है और सिख मतदाताओं को एकजुट करने के लिए अक्सर धार्मिक प्रतीकों और प्रथाओं का सहारा लेता है (जैफरेलॉट, 2003)।

राष्ट्रीय विमर्श पर प्रभाव

धर्म के राजनीतिकरण ने राष्ट्रीय विमर्श को आकार देने में भी योगदान दिया है। समान नागरिक संहिता की मांग, धर्मांतरण संबंधी कानून और अल्पसंख्यकों के अधिकार जैसे धार्मिक मुद्दे गहन राजनीतिक बहस के विषय बन गए हैं। राजनीतिक दल अक्सर इन मुद्दों का उपयोग अपने मतदाताओं को एकजुट करने के लिए करते हैं, वहीं धार्मिक संगठन भी सार्वजनिक क्षेत्र में अपने हितों की पैरवी करते हैं।

उदाहरण के लिए, समान नागरिक संहिता (यूसीसी) पर होने वाली बहसों, जो धर्म की परवाह किए बिना सभी नागरिकों पर लागू होने वाले कानूनों के एक समान समूह की वकालत करती हैं, ने महत्वपूर्ण राजनीतिक चर्चा को जन्म दिया है। हिंदू राष्ट्रवादी समूह अक्सर यूसीसी के पक्ष में तर्क देते हैं, यह दावा करते हुए कि यह राष्ट्र को एकजुट करेगा और यह सुनिश्चित करेगा कि किसी भी धार्मिक समूह को विशेष व्यवहार न मिले। दूसरी ओर, मुस्लिम संगठन और अन्य धार्मिक अल्पसंख्यक यूसीसी को अपनी धार्मिक स्वायत्तता के लिए एक चुनौती के रूप में देखते हैं, क्योंकि यह उनके व्यक्तिगत कानूनों में हस्तक्षेप कर सकता है (नुस्बाम, 2007)।

राजनेता चुनाव प्रचार के दौरान राजनीतिक रूप से इन मुद्दों को उठा सकते हैं, ताकि मतदाताओं को अपने पक्ष में कर सकें। उदाहरण के लिए, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में शराब के सेवन पर प्रतिबंध लगाने वाले कानूनों को अक्सर हिंदू मूल्यों को बढ़ावा देने के प्रयासों के रूप में पेश किया जाता है, जिससे हिंदू मतदाताओं का समर्थन प्राप्त होता है और गैर-हिंदू समुदायों को हाशिए पर धकेल दिया जाता है। इस तरह की राजनीतिक रूप से प्रेरित बयानबाजी देश में धार्मिक तनाव को बढ़ा सकती है और सांप्रदायिक विभाजन को और गहरा कर सकती है।

राजनीति में धार्मिक नेताओं की भूमिका

भारत में धार्मिक नेताओं ने अक्सर राजनीतिक प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे जनमत और नीतिगत निर्णय दोनों प्रभावित हुए हैं। ये नेता सांस्कृतिक प्रतीक और नैतिक मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं, और राजनीति में उनकी भागीदारी केवल राजनीतिक दलों का समर्थन करने तक ही सीमित नहीं है। धार्मिक नेता अक्सर अपने समुदायों के धार्मिक और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देने के लिए राजनीतिक मामलों में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं, जिसका व्यापक राजनीतिक परिदृश्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

राजनीतिक प्रभावकों के रूप में धार्मिक नेता

भारत में कई धार्मिक नेताओं ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल राजनीतिक चर्चा को सीधे तौर पर प्रभावित करने के लिए किया है। वे अक्सर सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों पर नैतिक आवाज बनकर उभरते हैं, खासकर जब ऐसे मुद्दे धार्मिक मान्यताओं से जुड़े होते हैं। पहले उल्लेखित राम जन्मभूमि आंदोलन इस बात का एक उत्कृष्ट उदाहरण है कि धार्मिक नेता किस प्रकार राजनीतिक गतिविधियों को दिशा दे सकते हैं। विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) के अशोक सिंघल और भाजपा नेता एलके आडवाणी जैसे नेता अयोध्या में राम मंदिर के निर्माण के लिए जन-संगठन में प्रमुख भूमिका निभा रहे थे, जिससे धर्म भारतीय राजनीति का एक केंद्रीय मुद्दा बन गया। ये नेता लाखों हिंदुओं को एकजुट करने में सफल रहे और आंदोलन को एक पूर्ण राजनीतिक आंदोलन में बदल दिया (जैफरेलॉट, 1996)।

धार्मिक संगठन और राजनीतिक गठबंधन

धार्मिक संगठन अक्सर अपने उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए राजनीतिक दलों के साथ राजनीतिक गठबंधन



बनाते हैं। ये गठबंधन औपचारिक सहयोग से लेकर राजनीतिक उम्मीदवारों या मुद्दों के लिए अनौपचारिक समर्थन तक हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) एक प्रभावशाली हिंदू संगठन है जिसका भाजपा के साथ गहरा संबंध है। आरएसएस भाजपा के सत्ता में आने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा चुका है, जिसने राजनीतिक रणनीतियों और जमीनी स्तर पर लामबंदी प्रयासों दोनों में योगदान दिया है (चंद्र, 2003)।

जमात-ए-इस्लामी और विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) जैसे धार्मिक संगठन अक्सर राजनीतिक गठबंधन या दबाव समूह बनाते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि उनकी धार्मिक मान्यताएं नीतियों में शामिल हों। ये संगठन अपने अनुयायियों को उन विशिष्ट दलों या उम्मीदवारों के लिए मतदान करने के लिए प्रेरित करते हैं जो उनके धार्मिक या सामाजिक विचारों का समर्थन करते हैं। वे धर्मांतरण, व्यक्तिगत कानूनों और धार्मिक स्थलों के संरक्षण जैसे मुद्दों पर जनमत को प्रभावित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

धार्मिक नेता और सामाजिक सुधार

राजनीतिक निर्णयों को प्रभावित करने के अलावा, कई धार्मिक नेताओं ने सामाजिक सुधारों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। स्वामी विवेकानंद, महात्मा गांधी और डॉ. बी.आर. अंबेडकर जैसे नेताओं ने अपने धार्मिक मंचों का उपयोग अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव और महिलाओं के अधिकारों जैसे सामाजिक मुद्दों को संबोधित करने के लिए किया। उदाहरण के लिए, गांधी जी का धार्मिक दृष्टिकोण अहिंसा और सत्याग्रह पर आधारित था, ये सिद्धांत भारत के स्वतंत्रता संग्राम और सामाजिक सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। उनके नैतिक प्रभाव ने उन्हें धार्मिक और राजनीतिक दोनों क्षेत्रों को प्रभावित करने की क्षमता प्रदान की, जिससे उन्होंने धार्मिक सीमाओं से परे जाकर विभिन्न उद्देश्यों को आगे बढ़ाया (नुस्बाम, 2007)। समकालीन भारत में, धार्मिक नेता सामाजिक सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहते हैं। हिंदू धर्म के शंकराचार्य या मुस्लिम समुदाय के इमाम जैसे व्यक्तित्व अक्सर सामाजिक मुद्दों पर अपने विचार रखते हैं और धार्मिक रीति-रिवाजों और आधुनिक राज्य नीतियों के बीच अधिक सामंजस्य स्थापित करने की वकालत करते हैं।

राजनीति में धार्मिक नेताओं के जोखिम

सामाजिक सुधार में उनके सकारात्मक योगदान के बावजूद, राजनीति में धार्मिक नेताओं की बढ़ती भागीदारी गंभीर चिंताएं भी पैदा करती है। राजनीतिक निर्णयों को सही ठहराने के लिए धर्म का उपयोग ध्रुवीकरण को जन्म दे सकता है, क्योंकि धार्मिक पहचान एकता की शक्ति के बजाय सामाजिक लामबंदी का एक साधन बन जाती है। पक्षपातपूर्ण राजनीति में धार्मिक नेताओं की भागीदारी धर्मनिरपेक्षता को भी कमजोर कर सकती है, क्योंकि यह धर्म और राज्य के बीच की रेखा को धुंधला कर देती है, जिससे धार्मिक समुदाय राष्ट्रीय या नागरिक पहचान के बजाय धार्मिक पहचान को प्राथमिकता देने लगते हैं।

राजनीतिक उम्मीदवारों का समर्थन करने वाले या पक्षपातपूर्ण राजनीति में सक्रिय भूमिका निभाने वाले धार्मिक नेता अपनी धार्मिक मान्यताओं को राजनीतिक विचारधाराओं से जोड़कर लोकतंत्र के धर्मनिरपेक्ष सिद्धांतों को विकृत कर सकते हैं। यह जुड़ाव अनुयायियों को धार्मिक निष्ठाओं के आधार पर मतदान करने के लिए प्रभावित कर सकता है, जिससे एक ऐसा राजनीतिक वातावरण बनता है जहां धर्म राजनीतिक परिणामों में निर्णायक कारक बन जाता है, अक्सर व्यापक राष्ट्रीय हितों की कीमत पर।

धार्मिक राष्ट्रवाद

भारत में धार्मिक राष्ट्रवाद एक महत्वपूर्ण राजनीतिक शक्ति के रूप में उभरा है, विशेष रूप से हिंदुत्व (हिंदू राष्ट्रवाद) के उदय के साथ। यह विचारधारा, जो यह दावा करती है कि भारत मुख्य रूप से एक हिंदू राष्ट्र होना चाहिए, ने भारतीय राजनीति को नया रूप दिया है और भारतीय संविधान द्वारा स्थापित धर्मनिरपेक्ष



ढांचे को चुनौती दी है। धार्मिक राष्ट्रवाद, विशेष रूप से हिंदुत्व के रूप में, धार्मिक पहचानों के बढ़ते राजनीतिकरण और भारतीय राजनीतिक लामबंदी पर उनके बढ़ते प्रभाव में योगदान देता है। यह खंड हिंदुत्व के उदय, इसके राजनीतिक निहितार्थों और राजनीतिक लामबंदी में धार्मिक पहचान की भूमिका का विश्लेषण करता है।

हिंदुत्व का उदय और इसके राजनीतिक निहितार्थ

हिंदुत्व, या "हिंदू राष्ट्रवाद," एक विचारधारा है जिसने 20वीं शताब्दी के आरंभ में अपने उदय के बाद से भारतीय राजनीति को काफी प्रभावित किया है। हिंदुत्व की जड़ें विनायक दामोदर सावरकर में देखी जा सकती हैं, जिन्होंने 1923 में अपने पर्व "हिंदुत्व: कौन है हिंदू?" में इस शब्द का प्रयोग किया था। सावरकर के हिंदुत्व के दृष्टिकोण में हिंदू संस्कृति, धर्म और मूल्यों पर आधारित राष्ट्रवाद का प्रस्ताव था, जिसमें धार्मिक अल्पसंख्यकों, विशेष रूप से मुसलमानों और ईसाइयों को राष्ट्रीय समुदाय से बाहर रखा गया था। उनके विचार, हालांकि प्रारंभ में वैचारिक अनुयायियों के एक छोटे समूह तक ही सीमित थे, 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, विशेष रूप से 1925 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के गठन के बाद, व्यापक रूप से प्रचलित हुए, जो बाद में हिंदुत्व विचारधारा के सबसे प्रभावशाली समर्थकों में से एक बन गया।

हिंदुत्व की नींव और उसका प्रारंभिक विकास

हिंदुत्व की विचारधारा इस विश्वास पर आधारित है कि भारत को मुख्य रूप से हिंदुओं के हितों की सेवा करनी चाहिए, क्योंकि वे देश की सांस्कृतिक और धार्मिक बहुसंख्यक आबादी का प्रतिनिधित्व करते हैं। हिंदुत्व भारतीय राष्ट्रीय पहचान के मूल में हिंदू सांस्कृतिक मूल्यों को बढ़ावा देने की वकालत करता है। हिंदू धर्म एक धर्म है, जबकि हिंदुत्व को एक राजनीतिक विचारधारा के रूप में देखा जाता है जो भारत की राष्ट्रीय पहचान को विशुद्ध रूप से धार्मिक रूप में परिभाषित करती है। यह धार्मिक अल्पसंख्यकों के साथ समान व्यवहार या राष्ट्रीय ढांचे के भीतर धार्मिक पहचानों के सह-अस्तित्व की अनुमति नहीं देता है।

सावरकर के विचारों को दक्षिणपंथी हिंदू राष्ट्रवादी संगठन आरएसएस और विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) ने आगे बढ़ाया और प्रचारित किया। वीएचपी का गठन 1960 के दशक में हिंदुत्व विचारधारा के प्रसार के स्पष्ट उद्देश्य से किया गया था। ये दोनों संगठन, आरएसएस की राजनीतिक शाखा के रूप में 1980 में गठित भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के साथ मिलकर, भारत में हिंदुत्व को एक राजनीतिक विचारधारा के रूप में स्थापित करने में प्रमुख भूमिका निभाते रहे हैं।

राजनीतिक उदय और राजनीतिक लामबंदी

हिंदुत्व के राजनीतिक निहितार्थ 1980 और 1990 के दशकों में अधिक स्पष्ट हो गए। राम जन्मभूमि आंदोलन (1980–1990 का दशक), जिसमें अयोध्या में बाबरी मस्जिद स्थल पर एक हिंदू मंदिर के निर्माण की मांग की गई थी, हिंदुत्व के उदय में एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। विश्व हिंदू परिषद (वीएचपी) और भाजपा के नेतृत्व में हिंदू राष्ट्रवादी कार्यकर्ताओं द्वारा 1992 में बाबरी मस्जिद के विध्वंस ने बड़े पैमाने पर सांप्रदायिक हिंसा को जन्म दिया, लेकिन इसने भाजपा को राजनीतिक मुख्यधारा में भी ला खड़ा किया।

एलके आडवाणी और अटल बिहारी वाजपेयी जैसे नेताओं के नेतृत्व में भाजपा एक अपेक्षाकृत गुमनाम राजनीतिक दल से एक प्रमुख राजनीतिक शक्ति में परिवर्तित हो गई। हिंदुत्व को अपनाने से पार्टी को हिंदू वोटों को एकजुट करने में मदद मिली, विशेष रूप से भारत के हिंदी भाषी क्षेत्रों में। हिंदुत्व भाजपा के राजनीतिक मंच का एक प्रमुख आधार बन गया, खासकर उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और गुजरात जैसे राज्यों में, जहां हिंदू धार्मिक भावनाओं का इस्तेमाल मतदाताओं को लामबंद करने के लिए किया गया।

1998 और 2014 के राष्ट्रीय चुनावों में भाजपा की जीत और 2014 में नरेंद्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने से हिंदुत्व का राजनीतिक प्रभाव चरम पर पहुंच गया। मोदी का सत्ता में आना न केवल उनकी राजनीतिक



रणनीतियों के कारण था, बल्कि आरएसएस और उससे संबद्ध समूहों के सक्रिय समर्थन के कारण भी था, जिन्होंने हिंदू राष्ट्रवाद का समर्थन किया। मोदी के शासनकाल में धार्मिक ध्रुवीकरण स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जिसमें अक्सर सार्वजनिक भाषणों में हिंदू प्रतीकों का उपयोग और हिंदू धार्मिक भावनाओं को भड़काना शामिल है, जिसे कई लोग हिंदुत्व का प्रत्यक्ष विस्तार मानते हैं (जैफरेलॉट, 2007)।

निष्कर्ष:

हिंदुत्व का उदय भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण मोड़ है। यह विचारधारा न केवल चुनावी रणनीतियों को प्रभावित करती है, बल्कि यह राष्ट्रीय विमर्श को भी आकार देती है। राम जन्मभूमि आंदोलन और बाबरी मस्जिद का विध्वंस ने हिंदुत्व को एक राजनीतिक शक्ति के रूप में स्थापित किया और इसे चुनावी राजनीति में प्रभावशाली बना दिया।

आज के भारत में, हिंदुत्व का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, खासकर जब धार्मिक ध्रुवीकरण और धर्मनिरपेक्षता की बात की जाती है। यह विचारधारा धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए एक चुनौती बन चुकी है और भारत के धर्मनिरपेक्ष ढांचे को खतरे में डाल रही है।

यह शोधपत्र यह दर्शाता है कि धर्म के राजनीतिकरण ने भारतीय राजनीति में बड़े बदलाव किए हैं, जो समाज को धार्मिक पहचान के आधार पर विभाजित कर सकते हैं। भारत को धर्मनिरपेक्षता की दिशा में आगे बढ़ने के लिए एक ऐसे ढांचे की आवश्यकता है, जो धर्म और राज्य के बीच की सीमाओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित करे, और धर्म को राजनीतिक उपकरण के रूप में प्रयोग करने से बचाए।

संदर्भ

- ✓ एजंग, एस., कुमार, ए.एस., और भट, आर.एम. (2025). भारतीय समाज की नींव: परिवार, रिश्तेदारी, धर्म और अर्थव्यवस्था। लेक्सआर्चिवस पब्लिकेशन्स।
- ✓ बोएटचर, एस.जे. (2025). कृत्रिम बुद्धिमत्ता और आध्यात्मिकता: धार्मिक सूचना और धार्मिक ज्ञान को जोड़ना। स्प्रिंगर नेचर।
- ✓ बोआस, टीसी (2023)। लैटिन अमेरिका में इंजीलवादी और चुनावी राजनीति: इस दुनिया का एक साम्राज्य। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
- ✓ कर्माकर, एस. (2025). कोलकाता में चुनावी राजनीति और झुग्गी विकास: राजनीतिक सहभागिता के माध्यम से शहरी चुनौतियों का सामना करना। शहरी सतत समाधान: वैश्विक सतत भविष्य के लिए अंतःविषयक विचार, 159.
- ✓ मित्रा, एस.के. (2021). शक्ति, विरोध और भागीदारी: भारत में स्थानीय अभिजात वर्ग और विकास की राजनीति। रूटलेज।
- ✓ सरकार, एन. (2022). धर्म-जातीयता और भारत में उभरता हिंदू वोट। सेज ओपन
- ✓ फिलिप्स, सी.एच. (संपादक)। (2021)। भारत में राजनीति और समाज। रूटलेज।
- ✓ तिवारी, एस. (2025). भारत में विवाह का दर्शन: अनुबंध, संस्था और नैतिक बंधन का त्रिपक्षीय विश्लेषण।
- ✓ हरहाप, आर. (2025). 2024 राष्ट्रपति चुनाव में सोशल मीडिया के प्रभाव का मिथक: भारत और तुर्की में इंडोनेशियाई मतदाताओं से अंतर्दृष्टि। दिरासात: मानव और सामाजिक विज्ञान, 53(5)।

